National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2025; 1(61): 41-44
© 2025 NJHSR
www.sanskritarticle.com

Prof. Sundar Narayan Jha
President Awardee, Professor,
Dept. of Veda,Shri Lal Bahadur Shastri,
National Sanskrit University
(A Central University)

Correspondence:
Prof. Sundar Narayan Jha
President Awardee, Professor,
Dept. of Veda,Shri Lal Bahadur Shastri,
National Sanskrit University
(A Central University)

भारतीय स्वतन्त्रता के समय वैदिक अध्ययन की स्थितियाँ: एक सिंहावलोकन

विद्यावाचस्पतिः प्रो. सुन्दरनारायणझाः

भा का अर्थ होता है प्रकाश, रत का अर्थ है मग्न। प्रकाश का पर्याय है ज्योति। **असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतं गमय।** उक्त तीनों महावाक्यों के व्याखान से यह बोध होता है कि असत् ही अन्धकार है, वही मृत्यु है। सत् ही ज्योति (प्रकाश) है, वही अमृततत्त्व है। बृहदारण्यक उपनिषद् में एक प्रसङ्ग वर्णित है कि एकबार मिथिला के महाराज जनक ने योगीश्वर याज्ञवल्क्य से पूछा कि किं ज्योतिरयं पुरुषः? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा कि- पञ्चज्योतिरयं पुरुषः। पुनः प्रश्न उठता है कि वे पञ्चज्योति कौन-कौन से हैं? तो उत्तर है-

- **सूर्यज्योतिः-** दिन में सूर्य के प्रकाशसे हमें ज्योति मिलती है।
- **चन्द्रज्योतिः-** शुक्लपक्ष में रात्रि के समय चन्द्रमा के प्रकाशसे हमें ज्योति मिलती है।
- **अग्निर्ज्योतिः-** कृष्णपक्ष में रात्रि के समय अग्निसे हमें ज्योति मिलती है।
- **वाग्ज्योतिः-** उपर्युक्त तीनों ज्योतियों के अभाव में वाणीसे हमें ज्योति मिलती है।
- **आत्मज्योतिः-** उपर्युक्त चारों ज्योतियों के अभाव में आत्मबल मात्र से हमें ज्योति मिलती है।

अज्ञान को अन्धकार तथा ज्ञान को प्रकाशस्वरूप (ज्योति) कहा जाता है। तदनुसार ज्ञानरूपी प्रकाश की खोज में जो अनवरत लगा रहे वह भारत है। विश्व के समस्त ज्ञान का मूल वेद है। अत एव वेदाध्ययन की मौलिक परम्परा भारत में ही देखी जाती है। अन्य देशों में जो वेदाध्ययन की परम्परा है वह मौलिक नहीं है। क्योंकि वेदमन्त्रें के जितने द्रष्टा ऋषि हैं उन सबों की मातृभूमि अखण्ड-भारत ही है। ऋषि-मुनियों के इस धरा-धाम पर देवगण अवतार लेकर पदार्पण करने को लालायित रहते हैं ऐसा विष्णु महापुराण में कहा गया है। यथा-

गायन्ति देवा किल गीतकानि धन्यास्तु ते भारतभूमिभागे।
स्वर्गापवर्गास्पदमार्गभूते भवन्ति भूयः पुरुषः सुरत्वात्।।

ऋ-गतौ धातु से ऋषिशब्द की निष्पत्ति होती है। तदनुसार व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ **ऋषति पश्यती'ति ऋषिः** होता है। अर्थात् जो देखता है वह ऋषि है। अब यहाँ पुनः प्रश्न उठता है कि देखता तो मैं भी हूँ और मेरे जैसा अन्य सभी मनुष्य, पशु, पक्षी, कृमि, कीट, लता, गुल्म, वृक्ष, वनस्पति एवं अन्नौषध्यादि सब देखते हैं, तो क्या ये सब ऋषि हैं? इसका उत्तर है नहीं।

चूँकि यह सम्पूर्ण चराचर दृश्यमान स्थूल जगत् है इसमें जो भी वस्तुएँ हैं सब स्थूल हैं, इन्हें हम स्थूलचक्षु से देख सकते हैं। किन्तु, जो सूक्ष्म तत्त्व है उसे सूक्ष्मचक्षु अर्थात् दिव्यदृष्टि से ही देखा जा सकता है। उन तत्त्वों को तत्त्ववेत्ता ऋषिगण ही देख पाते हैं। स्थूल वस्तुओं को देखना तो सामान्य दर्शन है, जिस दर्शन में विशेषता है, मात्र उस दर्शन हेतु प्रातिभचक्षुसम्पन्न द्रष्टा के लिए ऋषिशब्द का व्यवहार युक्तिसंगत है। कहा है-

यज्ञेन वाचः पदवीयमायँस्तामन्वविन्दन् ऋषिषु प्रविष्टाम्।[१]

अर्थात् यज्ञरूपी तप से ऋषियों में विज्ञानभाव से पहले से प्रविष्ट परावाग्रूप छन्दोमयी वाणी को भगवदनुग्रह से दिव्यदृष्टि से वे ऋषिगण स्वयं प्राप्त किये। दृष्टि से जो प्राप्त होता है वही दर्शनीय है। जो दर्शनीय है उसी दृश्य का दर्शन करने वाला द्रष्टा, ऋषि कहलाता है। इस प्रकार ऋषियों का देश भारतदेश है, उस देश के सभी निवासी भारतीय हैं।

भारतीय स्वतन्त्रता के समय वैदिक अध्ययन की स्थितियाँ-

भारत हजारों वर्षों तक पराधीन रहा। पहले तो बौद्ध, जैनादियों का ऐसा कुप्रभाव रहा जिससे भारतीय मौलिक चिन्तन का मार्ग अवरुद्ध सा हो गया। तत्पश्चात् मुगलशासकों एवं अंग्रेजों ने तो भारतीय सभ्यता एवं संस्कारों पर ऐसा प्रहार किया कि भारतीयों की अस्मिता ही खतरे में पड़ गई। उन विषम परिस्थितियों में भी भारत माँ के वीर सपूतों ने अहर्निश तप एवं त्याग के बलपर वेदाध्ययन के क्रम को भारत की धरती से विच्छिन्न नहीं होने दिया यही हमारे लिये गर्व का विषय है। उत्तर में काशी, कश्मीर एवं मिथिला, पूर्व में बंगाल एवं उत्कल, दक्षिण में महाराष्ट्र, कर्णाटक, आन्ध्र तथा पश्चिम में राजस्थान, गुजरात आदि स्थानों में अनेक वैदिक विद्वान् जैसे तैसे देश, काल एवं परिस्थिति के अनुरूप स्वयं को तथा अपने शिष्यों को संरक्षित रखकर वेदाध्यापन का कार्य कर रहे थे।

अंग्रेजों के शाशनकाल में सन् १७९१ ई. में वाराणसी में एक **शाशकीय संस्कृत महाविद्यालय** की स्थापना की गई थी। जब उत्तरप्रदेश के मुख्यमन्त्री माननीय डॉ- सम्पूर्णानन्द थे तब २२ मार्च १९५८ ई. को इस महाविद्यालय को **वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय** के नाम से घोषित किया गया। तत्पश्चात् सन् १९७४ ई. में श्री हेमवती नन्दन बहुगुणा मुख्यमन्त्री थे तब इसका नाम **सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय** के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। ध्यातव्य हो कि इस विश्वविद्यालय में आरम्भ से ही बड़े-बड़े वैदिकों के निर्देशन में वेदाध्यापन कार्य होता रहा है। सुप्रसिद्ध एवं लब्धख्याति वैदिक विद्वानों में एक नाम मुक्तकण्ठ से लिया जाता है, वह नाम है पण्डितप्रवर महामहोपाध्याय **विद्याधर शर्मा गौड (१८८६-१९४१)।** आपका समय यद्यपि स्वतन्त्रता के पूर्व का ही है किन्तु आपके शिष्यगण स्वतन्त्रता के समय वेदाध्ययन एवं अध्यापन का कार्य निःस्वार्थ भाव से यत्र-तत्र कर रहे थे। श्रीमान् विद्याधरशर्मा गौडजी की विद्या, सदाशयता, सद्धर्मनिष्ठा तथा कर्मनिष्ठा के अनुरूप उनके सहस्रों छात्र देश के कोने-कोने में वेद, कर्मकाण्ड तथा पौरोहित्य का प्रचार प्रसार कर रहे थे। यद्यपि उनकी साकल्येन गणना एवं चर्चा इस अल्पकाल में करना संभव नहीं है, तथापि प्राप्त परिचय संकेत तथा उच्चपदों पर आरूढ़ कतिपय मुख्यतम शिष्यों का निर्देश उपलब्ध कराया जा रहा है।

(1) पं- विश्वनाथशास्त्री (पाण्डेय) वेदाचार्य, प्रो. हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी।

(2) पं- भगवत्प्रसाद मिश्र वेदाचार्य, प्रोफेसर, गवर्नमेण्ट संस्कृत कॉलेज, वनारस।

(3) पं - वंशीधर मिश्र वेदाचार्य, प्राफेसर- श्री जो. म. गोयनका संस्कृत महाविद्यालय, काशी।

(4) पं- जगदानन्द झा वेदाचार्य, प्रोफेसर, गवर्नमेण्ट संस्कृत कॉलेज, पटना। शास्त्रचूडामणि- जगदीशनारायण ब्रह्मचर्याश्रम आदर्श संस्कृत महाविद्यालय, लगमा, दरभंगा, बिहार।

(5) पं- रमाकान्त झा वेदाचार्य, प्रोफेसर, संस्कृत कॉलेज, सुल्तानगंज (भागलपुर)।

(6) पं - गोपालचन्द्र मिश्र वेदाचार्य, प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय एवं सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।

(7) पं - मङ्गलदत्त त्रिपाठी वेदाचार्य।

(8) पं - योगीन्द्र झा वेदाचार्य, प्रोफेसर संस्कृत कॉलेज, मुजफ्फरपुर, बिहार।

(9) पं - दामोदर झा वेदाचार्य, राजकीय संस्कृत कॉलेज, गिद्धौर।

(10) पं - कमलनयन वेदाचार्य, अध्यापक संस्कृत विद्यालय, सोहनाग, देवरिया।

(11) पं - सूर्यनारायण गौड वेदाचार्य, प्रोफेसर राजकीय संस्कृत कॉलेज, जयपुर।

(12) पं - गिरिजा प्रसाद वेदाचार्य, राजपण्डित, भिनगा स्टेट (बहराइच)।

(13) पं - शिवमोहन दीक्षित वेदाचार्य, कानपुर।

(14) पं - विजय चन्द्र चतुर्वेदी वेदाचार्य, प्रोफेसर गवर्नमेण्ट संस्कृत कॉलेज, वनारस।

(15) पं - रामजीव द्विवेदी वेदाचार्य, प्राफेसर हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस।

(16) पं - मार्त्तण्ड शास्त्री घेडेकर वेदाचार्य, हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस।

(17) पं - चन्द्रधर चौधरी वेदाचार्य, दरभंगा।

(18) पं - हरि नारायण सारस्वत कर्मकाण्डी, काशी।

(19) पं - केदारनाथ अग्निहोत्री, काशी।

(20) पं - गङ्गाप्रकाश ब्रह्मचारी (सन्ध्याब्रह्मचारी)

इसके अतिरिक्त पं. सीताराम चतुर्वेदीजी ने **महामहोपाध्याय स्मारक-ग्रन्थ** में इनके ७६ प्रधान शिष्यों के नामों का पता के साथ उल्लेख किया है। उपर्युक्त विद्वान् जो श्रीमान् म-म-विद्याधरजीगौड के

शिष्य थे इनके अतिरिक्त अनेक भारतीय वैदिक विद्वानों की शिष्य परम्परा अत्यन्त समृद्ध रही है। भारतीय स्वतन्त्रता के समय वे लोग अपने शिष्यों को अपने घरों में रखकर भोजन-वस्त्रदि की व्यवस्था करके वेद का अध्यापन करते थे। उसी का परिणाम है कि आज हमलोगों को गुरुपरम्परा से वेदाध्ययन का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

चतुर्वेदमार्त्तण्ड वेदमूर्त्ति पं- जगदानन्द झा-(१९१०-२००२)

आचार्यप्रवर झाजी ने सर्वप्रथम काशीस्थ महामहोपाध्याय विद्याधर गौडजी से साङ्ग घनान्तपाठ (अष्टविकृतियों के भेद-प्रभेद सहित) शुक्लयजुर्वेद की शिक्षा ली, तत्पश्चात् वेदमूर्त्ति पं. श्री पञ्जूराम द्रविड़ गुरुजी के सान्निध्य में रहकर साङ्ग घनान्त सामवेद की शिक्षा ग्रहण की। ऋग्वेद एवं अथर्ववेद का अध्ययन कहाँ से हुआ यह ज्ञात नहीं। किन्तु पटना स्थित प्रसिद्ध हनुमान् मन्दिर जिसका निर्माण भारतीय पुलिस सेवा के बड़े अधिकारी सम्माननीय आचार्य किशोर कुणाल ने करवाया, वहाँ आदरणीय गुरुजी को ससम्मान बुलाकर १९८५ ई. में गुरुजी के स्वर में चारों वेदों का ध्वन्यघङ्कन कराया गया था जो आज भी हनुमान् मन्दिर पटना के वेबसाइट पर समुपलब्ध है। मेरा यह सौभाग्य है कि मैं जब लगमा ब्रह्मचर्याश्रम में प्रविष्ट हुआ था तब दैवसंयोग से परमपूज्य जगदानन्दझा गुरुजी वहाँ शास्त्रचूडामणि पद पर थे। श्रीमान् गुरुजी के मुखारविन्द से वेदाध्ययन आरम्भ करने का सुअवसर मुझे प्राप्त हुआ। आपने मिथिला में सामवेद की लुप्त परम्परा का उत्थान किया, उस क्रम में हमें भी सामगान सीखने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। आपके अनेकों शिष्य भारत के कोने-कोने में वेदविद्या के प्रचार प्रसार में जुटे हुए हैं। लगमा ब्रह्मचर्याश्रम पर आपके पास अधीतविद्य कुछ प्रमुख व्यक्तियों का स्मरण करना मैं उचित समझता हूँ। यथा- डॉ कृष्णकान्त झा (विभागाध्यक्ष संस्कृतविभाग, सरिसवपाही, मधुबनी) डॉ. पशुपतिनाथमिश्र (प्राचार्य, हरियाणा संस्कृत विद्यापीठ, बघौला), डॉ. महादेव झा (संस्कृत अध्यापक), पं- श्रवण कुमार झा (वेदाध्यापक), पं- सुधीर नाथ झा (कर्मकाण्डी) तथा मैं स्वयम्।

आदरणीय गुरुजी मिथिला के वैदिकों में प्रथम वैदिक हैं जिन्हे भारत के राष्ट्रपति द्वारा आजीवन पुरस्कार प्रदान किया गया था। तत्कालीन भारत के राष्ट्रपति रामास्वामी वेघङ्कटरमण द्वारा सन् १९८८ ई- में पुरस्कृत किये गये। इसके अतिरिक्त पुरस्कार सम्मानादि भी उन्हें प्राप्त हुआ।

आचार्य श्री भगवत्प्रसाद मिश्र- (१९०६-)

आचार्य मिश्रजी का जन्म जयपुर में १८-०९-१९०६ को हुआ। म-म- विद्याधरजी गौड के सान्निध्य में काशी में रहकर आपने सन् 1929 में वेदाचार्य की पीरक्षा उत्तीर्ण की। तत्पश्चात् विशेष परिस्थिति में अध्ययनकाल में (१९२९ में) ही आपको गवर्नमेण्ट संस्कृत कॉलेज में वेदाध्यापक पद पर नियुक्त कर दिया गया था। उक्त पद पर १९६७ तक आपने सेवाकार्य किया। १९७४ में वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय के रूप में परिणत होने पर आपको प्रथम वेदविभागाध्यक्ष बनाया गया। वहाँ आपने दर्शपौर्णमासेष्टि एवं अन्य सामयिक इष्टियों को सम्पन्न कराया। पण्डित श्री गोपालचन्द्र मिश्र आपके आत्मज थे।

आचार्य गोपाल चन्द्र मिश्र- (१९२४-१९८०)

काशी की वैदिक परम्परा में आचार्य गोपाल चन्द्र मिश्रजी का विशिष्ट स्थान है। आपका जन्म १५मई १९२४ को हुआ तथा १९२४ में वेदाचार्य परीक्षा उत्तीर्ण कर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अन्तर्गत संस्कृत महाविद्यालय का १९५३ से १९६७ तक वेदविभागाध्यक्ष रहे। आपने अनेक छात्रें को वेद पढ़ाकर उन्हें सुयोग्य वैदिक बनाया जिनमें वीरेन्द्र कुमार वर्मा, कमलाप्रसाद सिंह (संस्कृत विभाग हिन्दू विश्वविद्यालय), राजपति शुक्ल (मुजफ्फरपुर बिहार), राजेन्द्र प्रसाद मिश्र (संस्कृत कॉलेज जयपुर), नन्दकिशोर पाण्डेय (दरभंगा) आदि प्रमुख हैं। आपके सुपुत्र प्रो. युगल किशोर मिश्र एवं प्रो. श्रीकिशोर मिश्र अन्ताराष्ट्रिय ख्यातिप्राप्त वैदिक विद्वान् हैं। इन्होंने अपने दोनों पुत्रें को ब्रह्मचर्याश्रमपूर्वक वेदाध्ययन कराया तथा गुरुमुखोच्चारणानूच्चारण की परम्परा के साथ परीक्षाक्रम से वेदाचार्य की परीक्षा हेतु प्रवृत्त किया।

वैदिक-स्वर, छन्द, ऋषि-देवतादि विषयक संशयस्थलों का निर्णय देने में भी आपका वैदिक ज्ञान सर्वतोभावेन प्रशंसनीय है। अपने सेवाकाल की सम्पूर्ति होने से पहले ही ०९-०९-१९८० ई. में इहलौकिक लीला त्याग कर परलोक चले गये। आपकी सुप्रसिद्ध रचनाएँ-

(1) सूक्तरत्नसङ्ग्रह

(2) पृथिवीसूक्त का संस्कृत भाष्य

(3) सम्प्रदायबोधिनी शिक्षा

(4) याज्ञिकन्यायमाला

(5) वेदपाठविधि आदि।

पं- महादेव शास्त्री- (१९३३-२००८)

आदरणीय परमपूज्य वेदमूर्ति राष्ट्रपति सम्मानित पं- महादेव शास्त्री का प्राकट्य १५ अगस्त १९३३ ई- तथा प्रयाण ७ नवंबर २००८ ई- को हुआ। आपने गुरु परम्परा से वेदाध्ययन करके अनेक शिष्यों को वेदाध्ययन में प्रवीणता प्रदान की। आपकी विशेषता यह रही कि शुक्लयजुर्वेद के शतपथब्राह्मण का सस्वर अध्यापन करके आपने भारतीय वेदाध्येताओं पर महान् उपकार किया है, जो अविस्मरणीय हैं। आपके प्रधान शिष्यों में वेदमूर्ति पं- श्री चन्द्रभानु शर्मा, आचार्य वैकुण्ठनाथ शर्मा, आचार्य रामावतार शर्मा, आचार्य महेन्द्र शर्मा,

आचार्य अनिल शर्मा, आचार्य देव शर्मा, आचार्य रामकुमार शर्मा, श्री योगेश शर्मा, डॉ- शैलेन्द्र प्रसाद उनियाल, श्री लखीराम चमोली एवं श्री सतीश पाण्डेय आदि हैं। आपके शिष्यों की एक लम्बी सूची है। आपकी महनीय कीर्ति कौमुदी के ध्वज को आचार्य चन्द्रभानु शर्मा जी फहरा रहे हैं यह गौरव की बात है।

पं- शिवदास मिश्र (१९२६-१९८६)

आचार्य शिवदास मिश्र बिहार प्रान्त के आरा जिला के निवासी वेद के मूर्द्धन्य विद्वान् थे। आपने वेदविद्या का अध्ययन करने के उपरान्त विभिन्न संस्थाओं में वेदाध्यापन का कार्य किया। सर्वप्रथम आचार्यजी एक विद्यालय में नियुक्त हुए थे, तत्पश्चात् राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान जो अब केन्द्रीविश्वविद्यालय दिल्ली के रूप में लब्धख्याति है, के जगन्नाथ पुरी परिसर में कुछ वर्षों तक अध्यापन किये। वहाँ से पुनः दिल्लीस्थ श्री लाल बहादुर शास्त्री केन्द्रीय विद्यापीठ में आये यहाँ उन्होंने अनेक शिष्यों को तैयार किया। सौभाग्य से आदरणीय शिवदासमिश्र गुरुजी के दो प्रमुख शिष्यों से **प्रो. उपेन्द्रझा एवं प्रो. लक्ष्मीश्वरझाजी** गुरुजी से मुझे विद्याग्रहण करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। जब मैं लगमा से शास्त्री कक्षा उत्तीर्ण कर कामेश्वर सिंह दरभङ्गा संस्कृत विश्वविद्यालय में आचार्य में प्रविष्ट हुआ तो वहाँ **आचार्य नित्यानन्द मिश्र** शास्त्रचूड़ामणि पद पर नियुक्त थे, उनसे संहिता को भाष्य सहित पढ़ा तथा **प्रो. उपेन्द्रझा** गुरुजी वेदविभागाध्यक्ष थे। उपेन्द्र गुरुजी ने मुझे शतपथब्राह्मण, कात्यायनश्रौतसूत्र, अर्थसङ्ग्रह तथा कातीयेष्टिदीपक बड़े मनोयोग से पढ़ाया। आचार्य कक्षा उत्तीर्ण होने के उपरान्त शोधकार्य हेतु मैं दिल्लीस्थ श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय आया। यहाँ **प्रो. लक्ष्मीश्वरझा** गृरुजी के मार्गनिर्देशन में विद्यावारिधि की उपाधि प्राप्त की तथा परमादरणीय गुरुजी के श्रीमुख से कात्यायनश्रौतसूत्र एवं अन्यान्य श्रौतग्रन्थों का अध्ययन किया।

इस प्रकार आचार्यप्रवर शिवदासमिश्र गुरुजी की सुदीर्घ शिष्य परम्परा है, जिसे मैं यहाँ पूर्णरूप से उल्लिखित नहीं कर सकता हूँ। आंशिक विवरणों के साथ उनके पुण्यस्मरण मात्र से स्वयं को तृप्त कर आपलोगों को सुविदित कराकर इस प्रसङ्ग को विराम देता हूँ।

श्री रङ्गनाथकृष्ण सेलूकरजी महाराज- (१९२३-२००३)

श्री रङ्गनाथकृष्ण सेलूकरजी महाराज महाराष्ट्र का ग्राम-सेलू, जिला लातूर के निवासी माध्यन्दिन शाखाध्यायी श्रीकृष्ण सेलूकरजी के आत्मज रूप में सन् १९२३ ई. में उत्पन्न हुए। अपने पूज्य पिता से गुरुपरम्परानुसार वेदाध्ययन करने के उपरान्त स्वशिष्यों को वेदाध्ययन कराते हुए आपने अग्निहोत्र की विधिवत् दीक्षा लेकर अनेक इष्टि, पशु तथा सोमयागों का अनुष्ठान कर वैदिक समाज का महान् उपकार किया। ध्यातव्य हो कि उस समय जब भारत स्वतन्त्र हुआ था सर्वत्र भारतीय गणराज्य के लिए विहित अनुशासन भी भली भाँति लागू नहीं हो पाया था, तब आपके पूज्य पिता श्रीकृष्ण सेलूकरजी महाराज ने आज्य पशु और पिष्ट पशु के श्रौत विधान को अपनाकर अग्निष्टोम श्रौतयाग का अनुष्ठान किया था। तब तक आपके क्षेत्र में निजाम हैदराबाद का पूर्ण प्रभाव था। जब निजाम हैदराबाद को यह ज्ञात हुआ कि इतना विशाल यज्ञ हो रहा है तब निजाम ने उस क्षेत्र के लोगों को यज्ञ में भोज का निमन्त्रण भिजवाया। फलतः लाखों लोग राजा के भोज में सम्मिलित होने के बहाने यज्ञ का दर्शन करने आये थे। उस परिवार के सदस्यों के मुख से मैंने यह सुना है कि २०० किलो नमक दाल एवं सब्जी के लिये लगे थे, यह एक ऐतिहासिक भोज हुआ था। तत्पश्चात् श्री रङ्गनाथ सेलूकरजी महाराज ने अग्निष्टोम से प्रारम्भ कर एकाह एवं अहीनात्मक समस्त सोमयागों का अनुष्ठान करने के उपरान्त अनेक चयन एवं गवामयन सत्रयाग आदि बड़े-बड़े श्रौतयागों का अनुष्ठान किया। हजारों वर्षों के अन्तराल में भारत के इतिहास में गवामयन सत्रयाजी के रूप में आपका स्थान प्रथम रहा है। बाद में महाराष्ट्र के ही परभणी जिला के अन्तर्गत गंगाखेड़ में अपना आश्रम बनाया तथा अनेकों शिष्यों को अग्निहोत्रदि की दीक्षा दी।

उनके सुपुत्र यज्ञेश्वर सेलूकरजी महाराज आज भी अनेक बड़े-बड़े सोमयागों के अनुष्ठान कर रहे हैं। सम्प्रति श्रीरङ्गनाथ सेलूकरजी महाराज के पौत्र तथा श्री यशवन्त सेलूकर जी के पुत्र श्री ओङ्कार यशवन्त सेलूकर भी २०१७ ई. में अग्निहोत्र की दीक्षा लेकर अनेक इष्टि एवं सोमयागों के अनुष्ठान कर चुके हैं तथा कर रहे हैं, यह गौरव की बात है। संयोगवश ओंकार श्रीलालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय के देश-विदेश में प्रख्यात वेदविभागीय आचार्य प्रो. लक्ष्मीश्वरझाजी के सान्निध्य में रहकर शास्त्री से विद्यावारिधि तक के अध्ययन काल की यात्र को पूर्ण किया है। तत्पश्चात् ११ वर्षों तक वेङ्कटेश्वर वैदिक विश्वविद्यालय, तिरुपति एवं राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय, तिरुपति के वेदभाष्य विभाग में अपनी सेवा प्रदानकर श्रीलालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय, दिल्ली में अभी-अभी नियुक्त हुए हैं।